पुरूष हेतु

पुस्तक – मुक्तिबोध (पेज–47)
दादी माई (विजेन्द्र) कवि

पद्य

घूम रहा हूँ
धुँआ घुमड़ता हो जैसे अंदर
बे–चैन पूछता जब भी
मिलती दादी
कुछ झिझक, कुछ संकोच से
शब्द ठिठकते से
क्या हालचाल है, कहो दादी माई
फिर भूली सब छंद, ताल, लय, गान
पीछा करती अनुगूँजें ध्वनि की
कहती बड़े सबर से बाबू, जी मत बूझौ
बखत भौत बुरौ है
इतना कह सफेद पटसन बालों को गूँधा
मैली गर्दन खुजलाई
घौंटू तक अपनी धोती खींची
बोली निगाह मिलाकर
लड़का बड़ा ख्वार है
सोचा एक अकेला है
साथ घना देगा मेरा
ब्याह कर दिया
बात–बात झिड़क सुनाता
अपनी–अपनी ही कहता है
दिन–रात औरत उसकी
कान भरा करती है उसके
मुझ में अनगिन खोट बताती है
वह उसकी ही बातें साँच मानता
बात–बात में गाली बकता

गद्य (पुरूष)

भगवत : यह है धर्मपुरी नगर जिसके राजा हैं धर्मशील, जिनकी ख्याति और राज–सीमा दिग–दिगंत में फैली है। इसी नगर के दो युवक ही हमारे नाटक के नायक–युगल हैं। उनमें से एक का नाम है देवदत्त शर्मा। विप्रोत्तम पंडित विद्यसागरजी का एकमात्र पुत्र है : सुधी पंडित, विद्याधनी, कामदेव–सा सुन्दर, गौरवर्ण, कोमलकांत काया–जो प्रेम और न्याय के शास्त्राथों में दिग्गज पंडितों को परास्त कर चुका है, काव्य–कला में बड़े–बड़े महाकवियों को नीचा दिखा चुका है। देवदत्त शर्मा, मानो धर्मपुरी में हर आँख का तारा। दूसरा है कपिल : राज–शस्त्रागार का स्तम्भ–पुरूष, कर्म कार लोहित का सपूत। मेघ–सा साँवला रंग, सादा–सा चेहरा–मोहरा, पर घरेलू कामकाज और शारीरिक शक्ति–सामर्थ्य में एकदम असाधारण। मुष्टि–युद्ध, लट–युद्ध, बाहु–क्रीड़ा, मल्ल–क्रीड़ा, अखाड़े के दाँव–पेच, कसरत–क़वायद, तैराकी, उठा–बैठी, दौड़ा–दौड़ी, उछाड़–पछाड़–हर कला में अद्वितीय।

****

नाटक – आग़ा हश्र काश्मीरी के चुनिंदा ड्रामें (कोर्ट मार्शल)
(पेज–592–593)

उर्दू (पुरूष)

सररिश्तेदार : आला हज़रत मलका–ए–मुअज़्ज़िमा शम्सा के फ़ौजी क़ानून के मंजूर करदा और नवाब क़ल्लू के हस्बे मं"ाा बारहवीं रेजिमेन्ट के लेफ़्टिनेन्ट शहरयार वल्द शेरअफ़ग़न मुल्ज़िम पर मंदरजा ज़ैल क्राइम क़ायम किए गए हैं, अव्वल अफ़सरान–ए–बाला का बिला इजाज़त छावनी से ग़ैर–हाज़िर रहना, दोम बग़ैर इस्तिफ़ा दिये मुलाज़मत छोड़ देना। सोम अपने अफ़सर तुग़रल बेग पर बहालत अदाए फ़र्ज़ मुहलिक हमला करना, मज़कूरा बाला तमाम जराइम फ़ौजी अराकीन मनदरजा ज़ैल के रूबरू पे"ा किए गए। जनरल शाहनवाज़, करनल ज़फ़र मिर्ज़ा, मेजर दिलावर खां डिप्टी ज़हूर बेग मुल्ज़िम ने अपनी बरीयत की ताईद में और मनदरजा बाला जराईम की तरदीद में जो सबूत पे"ा किए वो इस्तग़ासा की रूदाद से बेसूद ठहराए गए, लिहाज़ा अदालत ने मजबूर होकर बतारीख़ 25 मोहर्रम–उल–हराम सन 1206 हिजरी बरोज़ च्हार शम्बा बमुक़ाम क़ाहिरा कैम्प हुक्म दिया है के ठीक बारह बजे दिन के गोली मार कर नमकहराम शहरयार की ज़ोरदार जिन्दगी का ख़ात्मा कर दिया जाएगा। दस्तख़त इज्ज़त पा"ाा कोर्ट मा"ार्ल 24 मोहर्रम 1206 हिजरी मक़ाम क़ाहिरा कैम्प।

स्त्री हेतु

पुस्तक – मुक्तिबोध (पेज–49–50)
दादी माई (विजेन्द्र) कवि

पद्य

कौन जान सकै है
कित्ती पीर छिपी है मन के भीतर
फिर भाव छिपाने को बोली
ई खन भयौ तुम कूँ देर भई होयगी
आप भले हैं, सुन लेते हैं हम जैसों की
किन कूँ कहाँ टैम है
खोए है सगु अपने–अपने में
आपकी बेटी छुटकी तो रानी है
रोज पिलाती पानी मुझ कूँ
ये पालौं काट रही हूँ
देखूँ मुंडी, भुक्ती, चितकबरी
इत–उत कूँ सरक गई हैं
ये तो सब माया है ईसुर की
करम खोरि टारै नाथ टरै, बाबू जी–
लिखा–बदा होके ही रहता है
लेकिन इतने पापड़ बेल चुकी हूँ
भौत भरोसौ है अपने ऊपर
मौत भी डर मानैं है मौं सूँ
आयेगी भी तो क्या लेगी मौं सूँ
जब तलक जीनौ है
ये आँच पिऊँगी
लेकिन सिर नीचा कर
न्हीं रहूँगी
नहीं रहूँगी...

****

कृ0पृ0उ0

नाटक हयवदन (पेज–95–96)

गिरीश कारनाड

गद्य (स्त्री)

पद्मिनी : आ, बेटे। तूने अभी घने जंगल जंगल का जादू–मेला नहीं देखा न ? चल, दिखा लाती हूँ। वहाँ की बात क्या बताऊँ, बेटे! सूरज निकलने के भी पहले पेड़ों की टहनियाँ धरती पर अल्पना रचती हैं, तारे आरती उतारते हैं। तब दिन निकलता है और तमाशा शुरू हो जाता है। फिर दिन–भर नाच–नाच–नाच। बन्दरों की बाजीगरी, कुक्कुटों की लड़ाई। मोरों का नाच। धारीदार शेरों का नाच। और नदी–तल पर नन्हें पाँवों में चाँदी की पायलें पहने सूरज का नाच। घने जंगल के बीचोबीच संकेश्वर फूल का रथ सजा है। सोने का रथ है बेटे, जिसे झुंड–के–झुंड पंछी खींचते हैं, अनगिनत पलाश वृक्ष लाल मशाल थामे बन्दगी करते हैं। फिर धीरे से रात घिरेगी, मुन्ने को निंदिया आवेगी, और बस, एक ही फूँक में चाँद बुझ जाएगा। पर लौटने के पहले एक काम और। वहीं पास, मेले से बाहर एक कोने में, सुहाग के फूल का पेड़ खड़ा है। पुराना पेड़ है, हमारा गहरा बन्धु। बड़ा प्यारा है। हम उससे बातें करेंगे, नमस्ते कहेंगे। ठीक है न, बेटे ? अब चलो।

****

नाटक – आग़ा हश्र काश्मीरी के चुनिंदा ड्रामें (महल–ए–मुमताज़)

(पेज–583)

उर्दू (स्त्री)

मुमताज़ : व्हाट इज़ दिस नॉनसेंस ? ये मर्द तो हमें कुछ ख़्याल में नहीं लाते। कहते हैं कि हम औरतों को पांव की जूती के बराबर समझते हैं, घर में झाड़ू हम दें, बर्तन हम साफ़ करें, रोटी हम पकावें, बच्चे हम पालें, ग़र्ज़ कि तमाम घर का काम तो हम करें और ज़रा कहीं बाहर सैर करने या तफ़रीह करने को जावें तो क्यों गई। खिड़की में से क्यों झांकी ? उसे क्यों देखा, उससे क्यों आंख मिलाई ? मगर शुक्र है के पहले सी अब बेवकूफ़ नहीं हूं, कुछ अंग्रेज़ी पढ़ने लिखने से कुछ मिस ख़ैरसल्ला की सोहबत में रहने से आठों–गाँठ कमीत हो गई हूँ। अब मियां की एक नहीं मानती हूं। अगर कुछ कहते हैं तो एक–एक की दस सुनाती हूं। घरदारी का काम नहीं करती हूं।

गानाः घरदारी संसारी नारी क्या जानूं। कैसो है पायो भांवरवा,

ऐसो रह के टोके मोके पहड़वा, वा से जरे मोरा जिगरवा,

घुड़की–घुड़की झिड़की नित–नित जर–जर मोरा जियरा,

काट–काट मोहे क़ैद घरवा, रोकत मोरा जिगरवा घरवारी .....